उलूक

मुझे मंद मति समझा मानव,
यद्यपि बहुत दिनों तक |
किन्तु न इसका खेद स्वार्थ है,
सधता मेरा जब तक || 1

मुझसे नयन विशाल खगों में,
बोलो किसने पाये |
मै वह सकता देख अन्य को,
जो अदृष्ट रह जाए || 2

जो न देखना मुझे देखता,
नहीं परम मैं हठ कर |
भले प्रकाशित करे दृश्य को,
मध्यान्ह स्थित दिनकर || 3

तरु कोटर में जन्म लिया है,
तम से गहरा नाता |
असहज हो जाता प्रकाश में,
सविता मुझे न भाता || 4

जागृति पर एकाधिकार मम,
सोये सारी खगता |
नीरव निशा, तारकित नभ ही,
रुचिकर मुझको लगता || 5

तंद्रित निद्रित या कि स्वप्नरत,
जब तक सकल विहंगम |
तब तक मेरा राज्य सुरक्षित,
तथ्य मुझे हृदयंगम || 6

जागृति इनकी क्षणिक दिवा परि,
सीमित यह मम हितकर |
दिवस बिताता अत: तमावृत,
इस कोटर में छिपकर || 7

तिमिराच्छादित अर्ध काल के,
हम कौशिक कहलाते |
एकराट हम सत्य, स्वर्ग में,
मघवा मन बहलाते || 8

जहाँ गूँजती है रह रह कर,
मेरी भयप्रद वाणी |
निर्जन होता स्थान शीघ्र ही,
सभी जानते प्राणी || 9

कृपा पात्र हम सदा इंदिरा के,
रहते आए हैं |
धन के कारण हम वाहनता,
भी सहते आए हैं || 10

खग होकर भी स्वयं खगों का,
मै भक्षण करता हूँ |
हितबाधक यदि बन्धु न मैं,
फिर परि रक्षण करता हूँ || 11

सद्य: कृन्तित करता सुत यदि,
हुआ महत्वाकांक्षी |
परम शत्रु है वही हुआ जो,
मम पद का अभिलाषी || 12

मम कोटर सामान्य न वैभव,
का है यहाँ बसेरा |
पर जो गुप्त निवास वहाँ पर,
लक्ष्मी डाले डेरा || 13

जाता छिप कर वहाँ रत्न द्युति,
से शीतलता पाने |
दर्शित संयम को कुछ दिन तक,
वारुणि बीच डुबाने || 14

मात्र भोग उद्देश्य शक्ति का,
धन का रहा सदा ही |
लोक दृष्टि से धर्म स्वधन से,
करता यदा कदा ही || 15

रविकर विकसित विविध वर्णता,
मुझे न रुचिकर लगती |
भाता मुझे निशीथ असित पट,
ओढ़ सुप्त यह जगती || 16

करता एक वर्ण संसृति को,
तिमिर मित्र है मेरा |
उतना मम साम्राज्य सुनिश्चित,
जितनी दूर सवेरा || 17

हँसो न मुझ पर बोल रहा हूँ,
अपने चिर अनुभव से |
कहाँ खोजते सत्य ! गया वह,
बहुत दूर इस भव से || 18

जग यदि अस्थिर अस्थिर सुख में,
ही हर्षित होना है |
शाश्वत अन्वेषण, मन, इन्द्रिय,
का कर्शित होना है || 19

नित्य करो उपदिष्ट यम नियम,
अपरिग्रह गुण गाओ |
त्याग तितिक्षा भाव लोक में,
पटुता से उपजाओ || 20

त्यागी होंगे शिष्य भरेगा,
तभी धाम यह तेरा |
काम्य किसे कमला का फेरा,
प्रार्थित है श्री डेरा || 21

नाम दिलाता नाम ईश,
ऐश्वर्य दिलाते भारी |
अपने उदाहरण से करदो,
सिद्ध विपुल मति धारी || 22

शित नखरों को प्रक्षालित कर,
करके चंचु सुमार्जित |
बैठो धवलासन पर जन की,
श्रद्धा करो उपार्जित || 23

गहरे होते दाग रूधिर के,
मांस महकता भारी |
इन्हें छिपाने में प्रवीण ही,
यश का है अधिकारी || 24

सूर्य न दिखलाया जा सकता,
जन्मान्धों को भाई |
क्षुद्र मन्नतों का परिपूरण,
आस्था की भरपायी || 25

हम वैशेषिक दर्शन कर्ता,
सुनलें प्रज्ञा मानी |
अणुजा सृष्टि बतायी हम हैं,
तमोनिरूपण ज्ञानी || 26

हम से पा प्रेरणा द्रौणि ने,
सकल शूर संहारे |
वही सफल जो प्रबल शत्रु को,
छल बल से ही मारे || 27

विस्मित मत हो चार्वाकों का,
चिर यह जीवन दर्शन |
सत्य कहाँ स्वीकार्य लोक को,
मानित यहाँ प्रदर्शन || 28

मंत्र दे दिया तुमको मैंने,
ग्रहण करो गुरुदीक्षा |
अब स्वतंत्र तुम नहीं, करो मत,
मम सिद्धांत समीक्षा || 29

नहीं विकल्प शेष अब कोई,
करो यहीं गुरु सेवा |
मेवा खाते शिष्य द्रोह रत,
बनते काल कलेवा || 30

तभी चीख कर उठा जगा मैं,
अरे ! भयावह सपना |
कंपित गात्र रहा कुछ क्षण तक,
शीश पकड़ कर अपना || 31

07-09-2017 शिव कुमार मिश्र